दलितों व शोषितों का पाक्षिक पत्र
विज्ञापन के लिए केन्द्रीय सरकार व राज्यों द्वारा स्वीकृत

हमायती

सम्पादक–डॉ0 सोहनपाल सुमनाक्षर

❑ *वर्ष 57* ❑ *अंक-2* ❑ *दिल्ली* ❑ *नवम्बर, 2018 (प्रथम)* ❑ *मूल्य : 2 रु.*

'आरक्षण' ही देश के लिए लाभकारी

-रमेश सोलंकी, एडवोकेट

आजकल उच्च वर्ण के लोग भारतीय संविधान द्वारा अनुसूचित जाति–अनुसूचित जनजाति के लोगों को दिये जा रहे आरक्षण के खिलाफ आवाज उठाकर इसे समाप्त करने की मांग कर रहे हैं। वास्तव में ये लोग शोषित लोगों की पीड़ा से परिचित नहीं। ये वो लोग हैं जो चांदी के चम्मच मुंह में लेकर पैदा हुए। लगभग ऐसे ही हमारे देश की सुप्रीम अदालत में बैठे लोगों की स्थिति है जो न्यायकर्ता है। इन महान् लोगों से अनुरोध है कि कृपया खोजें कि क्या भारतीय सेना में, मीडिया में, संसद के उच्च सदन राज्य सभा में भारत की उच्च न्याय व्यवस्था में, देश के सर्वोच्च पदों पर निजी क्षेत्र, विधान परिषदों में, विज्ञान क्षेत्र में, बड़े ठेकेदारों में तथा उद्योग–व्यापार में दलितों की भागीदारी कितनी है। यह कैसी विडम्बना है कि स्वतन्त्रता के 70 वर्षों बाद भी शीर्षस्थ पदों पर शोषित वर्ग का व्यक्ति नहीं है। जबकि निम्न पद सफाई का सेवा कार्य में शत प्रतिशत इन लोगों की भागीदारी है।

सरकारी आंकड़ों के अनुसार सरकारी विभागों में सचिव स्तर के 149 अधिकारियों में अनुसूचित जाति का एक भी नहीं। अतिरिक्त सचिव स्तर पर मात्र चार, संयुक्त सचिव स्तर पर 477 अधिकारियों में मात्र 46 अधिकारी इन वर्गों से हैं। इसी तरह 590 निदेशकों में से मात्र 4.06 प्रतिशत अधिकारी हैं। जिन पदों पर 'आरक्षण' की व्यवस्था है, इनके पद खाली हैं। केन्द्रीय केबिनेट की किसी पिछली मीटिंग में प्रधानमंत्री ने स्वीकार किया कि इन वर्गों के लिये विभिन्न श्रेणियों में आरक्षण के चलते 75522 रिक्तियां हैं। जिनमें से 44427 सीधी भर्ती में से 28588 ही भरी जा सकी, तो 35.65 प्रतिशत यानि 64.35 प्रतिशत पद आज भी रिक्त है। पदोन्नति के 31095 पद जो अब तक अधर में लटके हुए हैं। जानकारी के लिए समूह 'क'(अ) 13.4 में प्रतिशत मात्र है, समूह 'ख' (बी ग्रुप) 19.6 प्रतिशत है। अलबत्ता समूह 'ग' (सी) में इनकी स्थिति संतोषजनक 21.84 प्रतिशत है। समूह 'घ' (डी ग्रुप) जिसमें 26.3 प्रतिशत अच्छी हालत में है, लेकिन इनमें से 51.25 प्रतिशत सफाई कर्मचारी हैं। यह हालात देश के 70 वर्ष आजाद होने पर है जो इन वर्गों के लिये 22. 5 प्रतिशत निर्धारित आरक्षण कोटे के स्थान पर मात्र 5 प्रतिशत नौकरियों में दलितों का प्रतिनिधित्व है।

कुछ विद्वान लेखकों का कहना कि अच्छी योग्यता वाले युवा आरक्षण के कारण नौकरियों से परहेज करने लगे हैं। जहां तक इन वर्गों के उम्मीदवार की प्रतिभा एवं योग्यता का प्रश्न है? यह उल्लेखनीय है कि सन् 2011 की सिविल सेवा परीक्षा में 910 में से 91 उम्मीदवार सामान्य श्रेणी में चयन होने के कारण 91 पद खाली पड़ गये। वैसे भी देश में उदारीकरण, निजीकरण एवं भूमंडलीकरण के कारण सरकारी विभागों में लगभग तीन से चार लाख नौकरियां कम हुईं। निजी संस्थाओं, कम्पनियों, उद्योगों में आरक्षण का प्रावधान नहीं।

जब गैर आरक्षित वर्ग के लोग बेरोजगार बनते हैं, तो 'आरक्षण' के नाम पर हंगामा खड़ा करते हैं। वैसे तो आरक्षण होते हुए भी 70 लाख के लगभग देशभर में फैले रोजगार कार्यालयों में इन वर्गों के बेरोजगार

(शेष पृष्ठ 3 पर)

भारतीय दलित साहित्य अकादमी का 34वां राष्ट्रीय सम्मेलन

भारतीय दलित साहित्य अकादमी का 34वां राष्ट्रीय दलित साहित्यकार सम्मेलन 9-10 दिसम्बर, 2018 को पंचशील आश्रम, झड़ोदा गांव (बुराड़ी बाई पास) आ ऊटर रिंग रोड, दिल्ली में आयोजित किया जा रहा है। भारत रत्न बाबा साहब डा. अम्बेडकर की 127वीं जयन्ती के अवसर पर आयोजित इस सम्मेलन में देश–विदेश के हजारों दलित साहित्यकार और दलित समाजसेवी भाग लेंगे और दलितों की प्रज्ज्वलित समस्याओं पर विचार–विमर्श करेंगे।

इस अवसर पर सम्मेलन में दलितोत्थान के विभिन्न क्षेत्रों में सराहनीय कार्य करने वाले दलित साहित्यकारों, कलाकारों और समाजसेवियों को सम्मानित किया जायेगा। सम्मेलन में विभिन्न प्रदेशों के सांस्कृतिक कार्यक्रम भी प्रस्तुत किये जायेंग और दलितोत्थान के विभिन्न विषयों पर शोध–पत्र भी पढ़े जायेंगे। दलितों की दशा और दिशा सम्मेलन में मुख्य विषय होगा। इस द्विदिवसीय सम्मेलन में साथियों सहित आप सादर आमन्त्रित हैं :

डा सोहनपाल सुमनाक्षर
राष्ट्रीय अध्यक्ष, मो. 9810278936
जय सुमनाक्षर
राष्ट्रीय महासचिव मो. 9891989175
मु. कार्यालय : भारतीय दलित साहित्य अकादमी, बी 3/9, दूसरी मंजिल, माडल टाउन–1, दिल्ली–110009 (माडल टाउन मेट्रो स्टेशन के पास)

सम्पादकीय

किंग मेकर नहीं, किंग बनो

मैंने कई बार अपने उद्‌बोधनों में कहा है–''अपनी शक्ति को जानो और अपने दुश्मनों को पहचानो।'' तभी उन दुश्मनों के खिलाफ अपनी शक्ति का सही इस्तेमाल कर हम सुरक्षित और सुखी रह सकेंगे।

मैंने कई बार यह भी लिखा है कि एक बड़े घर में पैदा होकर बड़ा व्यक्ति बन जाना कोई बड़ी बात नहीं, पर एक छोटे घर में पैदा होकर अपनी लगन और परिश्रम के बल पर बड़ा व्यक्ति बन जाना बहुत बड़ी बात है।

गत 6 अक्तूबर को मलोट (पंजाब) में आयोजित प्रादेशिक साहित्यकार सम्मेलन को सम्बोधित करते हुए मैंने कहा था–''खोदो व खोजो''–आपको मूल निवासी तुम्हारे पूर्वजों का इतिहास प्रगट होगा। यहां पर खोदों से मतलब विदेशियों द्वारा यहां के मूल निवासियों पर अचानक आक्रमण करके उनके शहरों को नष्ट भ्रष्ट कर मिट्‌टी में दबा दिये गये शहरों को खोदकर पुनः निकाल लिए जाने से है। इसी तरह खोजों का मतलब आर्यों के धार्मिक ग्रन्थों का गहराई से अवलोकन करने से है, जहां से हमारे पूर्वज मूल निवासियों के पराक्रम का इतिहास झांकता नजर आता है जो दलितों की शौर्य गाथा लिखने में सहायक है।

हमने 'हिमायती' के पिछले अंकों में 'दलित'–दलित शब्द की शक्ति और दलित साहित्य व दलित साहित्य आन्दोलन पर विस्तार से लिखा है, और दलित साहित्य और दलित साहित्य अकादमी के सक्रिय आन्दोलन की करामात है कि देश का सवर्ण–उच्च वर्ण दलित आन्दोलन की शक्ति से घबराकर 'दलित' शब्द पर ही पाबन्दी लगाने की मांग कर रहा है और उसने सरकारी दफ्तरों में 'दलित' शब्द के इस्तेमाल पर पाबन्दी लगाने के लिए उच्च न्यायालयों का सहारा भी लिया है। पर जैसे 'राम' के नाम लेने पर पाबन्दी नहीं लगाई जा सकती, वैसे ही दलित शब्द पर पाबन्दी कारगर नहीं हो सकती क्योंकि 'राम' नाम की तरह 'दलित' शब्द भी लोगों की जिव्हा व दिल दिमाग पर रचा–बसा है। और मजे की बात है कि 'राम' दलितों के नाम में ऐसा आगे–पीछे व बीच में जुड़ा है कि उसे हटाया नहीं जा सकता। उदाहरण के तौर पर–बाबू जगजीवन राम, रामधन, रामनाथ कोविंद, कांशीराम, रामरतनराम, डॉ. अम्बेडकर राम जी राव, रामविलास पासवान, चांद राम, रामजीलाल सुमन, रामलाल, रामवचनराम, डा. तुलसीराम आदि। अब जरा खोजो तो सही, किसी भी सवर्ण के नाम के साथ 'राम' जुड़ा है जो रात दिन कसम राम की खाते हैं कि मन्दिर वहीं बनायेंगे। लगता है 'राम' नाम से उन्हें कुछ लेना–देना नहीं, न ही सच्चे मन से राम की आराधना करना चाहते हैं। 'राम' नाम से वे 'राम' नामधारियों को हिन्दू धर्म पताका के नीचे ध्रुवीकरण करके देश की सत्ता पर पुनः काबिज होना चाहते हैं। भले ही गत पांच साल की सत्ता में 'राम' के नाम पर उन्होंने एक छोटा सा मन्दिर भी नहीं बनवाया हो। खैर, बाबा साहब डा. अम्बेडकर अक्सर कहा करते थे कि यह देश मूल निवासियों का देश है। अछूत, बहिष्कृत, दलित, पिछड़े 85 फीसदी की आबादी वाले मूल निवासी इस देश के निर्माता रहे हैं। उन्होंने इसे इतना समृद्ध बना दिया था कि विदेशी भी इसे 'सोने की चिड़िया' कहकर इसकी खुशहाली का गान गाते थे। और विदेशी आर्यों ने सोने की चिड़िया भारत पर आक्रमण करके यहां के परिश्रमी, ज्ञानवान, शान्त स्वभाव के लोगों को मारकर भगा दिया और उनकी जमीन–जायदाद पर कब्जा करके इस 'सोने की चिड़िया वाली सिन्धु सभ्यता को उजाड़कर

(शेष पृष्ठ 4 पर)

भारतीय दलित साहित्य अकादमी प्रकाशन

विश्व धरातल पर दलित साहित्य	डॉ. सुमनाक्षर	50/-
अंधा समाज और बहरे लोग	डॉ. सुमनाक्षर	60/-
सिन्धु घाटी बोल उठी	डॉ. सुमनाक्षर	50/-
अब नहीं रहेंगे हाशिये पर	डॉ. सुमनाक्षर	80/-
अम्बेडकर शतक	डॉ. सुमनाक्षर	50/-
विश्व विभूति डा. अम्बेडकर	डॉ. सुमनाक्षर	50/-
दलित लेखक परिचय ग्रंथ (अंग्रेजी)	डॉ. सुमनाक्षर	250/-
बुद्धा टू अम्बेडकर (अंग्रेजी)	डॉ. सुमनाक्षर	150/-
दलित साहित्य	डॉ. सुमनाक्षर	100/-
अम्बेडकर दर्शन	डॉ. सुमनाक्षर	40/-
हमारे संत और समाज सुधारक	डॉ. सुमनाक्षर	60/-
धर्म और समाज	डॉ. सुमनाक्षर	40/-
आदिम जाति चमार (इतिहास, धर्म, संस्कृति)	डॉ. सुमनाक्षर	300/-
दलित उद्‌घोष	डा. सुमनाक्षर	80/-
दलित साहित्य की हुंकार-सात समन्दर पार	डॉ. सुमनाक्षर	100/-
युगपुरुष बाबू जगजीवनराम	डॉ. सुमनाक्षर	200/-
प्राचीन आदिम जाति वाल्मीकि (इतिहास, धर्म, संस्कृति)	डॉ. सुमनाक्षर	100/-
सभ्यता, संस्कृति, समाज और साहित्य	आचार्य गुरुप्रसाद	100/-
डा. अम्बेडकर भजनावली	राजमल 'राज'	25/-
हमारे दलित गौरव	राजमल 'राज'	25/-
भारत रत्न डा. बी.आर. अम्बेडकर	राजमल 'राज'	25/-
मूल भारती से दलित	राजमल 'राज'	50/-
अम्बेडकरवाद बनाम सामाजिक परिवर्तन	राजमल 'राज'	80/-
दलित साहित्य–दशा और दिशा	डा. माता प्रसाद	200/-
दलित साहित्य से सामाजिक परिवर्तन	डा. माता प्रसाद	100/-
भारत की गुलामी के 22 सौ साल	प्रदीप कुमार मौर्य	250/-
सृजन के कण	जीपी पचौरिया 'दीप'	150/-
बौद्ध धर्म–गया से अयोध्या तक	प्रदीप कुमार मौर्य	120/-
गांधी, अम्बेडकर और दलित	प्रदीप कुमार मौर्य	100/-
सत्सम दर्शन	राजमल 'राज'	100/-
जागा मेहनतकश इंसान	राजमल 'राज'	50/-
हम एक हैं	डा. माता प्रसाद	60/-
रैदास से संत शिरोमणि गुरु रविदास	डा. माता प्रसाद	50/-
ताकि सनद रहे	डा. सुमनाक्षर	100/-

पुस्तक मंगाने के लिए मनीआर्डर से राशि अग्रिम भेजें, व्यवस्थापक,

दलित साहित्य सेन्टर

(भारतीय दलित साहित्य अकादमी)

बी-3/9, दूसरी मंजिल, माडल टाउन-1, दिल्ली-9

फोन : 27421449, 27421460, मो. 9810278936

बाबू जगजीवन राम का प्रेरणादायक जीवन

• डा. अमित के. सुमन

जगजीवन राम, जिन्हें प्यार से 'बाबूजी' कहा जाता है, एक स्वतंत्रता सेनानी और सामाजिक न्याय के धर्मयोद्धा थे। सार्वजनिक जीवन में उनके आकाशीय उत्थान में उन्हें एक महत्वपूर्ण और लोकप्रिय राजनेता के तौर पर उभरते हए देखा गया, जिन्होंने अपनी पूरी जिंदगी देश कल्याण के लिए काम करने में लगा दी। एक राष्ट्रीय नेता, सांसद, केन्द्रीय मंत्री और पिछड़े वर्गों के महत्वपूर्ण नेता के तौर पर उनकी शानदार उपस्थिति थी और भारतीय राजनीति में लगभग आधी सदी तक उन्होंने एक लम्बी पारी खेली। 20वीं सदी की राजनीति की उनकी दीर्घकालीन और सर्वोत्कृष्ट विरासत हमें भारतीय राजनीति के नेतृत्व के जोश, आदर्शवाद और अदम्य साहस की याद दिलाता है जिन्होंने न सिर्फ आजादी की लड़ाई लड़ी और देश की आजादी हासिल की, बल्कि एक आधुनिक लोकतांत्रिक राजव्यवस्था की बुनियाद भी रखी। वे राजनीतिक नेतृत्व की प्रतिभा से सम्पन्न और देश पर छाए हुए सामाजिक–राजनीतिक घटनाओं तथा आदर्शों और लक्ष्यों से प्रेरित थे।

बाबू जगजीवन राम ने हमारे देश के राजनीतिक और संवैधानिक विकास तथा सामाजिक बदलाव की रूपरेखा भेदभाव, जिसकी वजह से समाज के एक बहुत बड़े तबके को हाशिए पर धकेल दिया गया था, बाबू जगजीवन राम ने अपनी नेतृत्व शक्तियों और अपनी क्षमताओं का उपयोग इन्हीं वंचित तबके के उत्थान के लिए किया। लोककल्याण को प्रोत्साहन देना और खासतौर से पिछड़े तबके का उत्थान उनके जीवन का उद्देश्य था। धर्मपरिवर्तन के मामले पर उनका यह विचार था कि दूसरे धर्मों को अपना लेने से न तो दलितों के साथ होने वाला अन्याय रूकेगा, न ही उनका सामाजिक दर्जा बदलेगा। इसके बदले उन्होंने पिछड़े समुदाय के लोगों को अपने प्रयासों के जरिए खुद की स्थिति में बदलाव करने, अपने विकास के लिए कार्य करने और देश की मुख्यधारा में शामिल होने को कहा। इस परिप्रेक्ष्य में उन्होंने एक बार कहा, ''देश की तरक्की में ही हमारी तरक्की है। देश के उद्धार में ही हमारा उद्धार है, और देश की मुक्ति में ही हमारी मुक्ति है।''

बाबूजी समानता के अधिकारों की मांग करने और पिछड़े तबके के सशक्तिकरण के लिए एक नए युग का प्रतीक थे। उनका जीवन पिछड़े वर्ग के लोगों के लिए एक सकारात्मक पहल था, जो राष्ट्रीय राजनीतिक पटल पर उनकी उपस्थिति से बेहद प्रेरित के लिए बहुत महत्वपूर्ण योगदान दिया। एक के बाद एक देश के प्रधानमंत्रियों ने उनकी प्रतिभा और विशेषज्ञता में अडिग विश्वास बनाए रखा। बाबू जगजीवन राम ने कांग्रेस पार्टी, सरकार और संसद को अपना सर्वोत्कृष्ट योगदान दिया। उन्होंने इस राजनीतिक कुलीनता को स्थापित किया, जिससे हमारे देश की संसदीय संस्थाओं की कार्यशैली को मजबूती प्रदान की और इनमें जनता का विश्वास स्थापित किया। बाबू जगजीवन राम की छवि, उनका उत्साह, उनकी साख तथा उनके अनुभवों के खजाने ने उन्हें एक अनोखा नेता बना दिया। पूर्व केन्द्रीय स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्री डा. करण सिंह बाबू जगजीवन राम के संसदीय दिनों को इन शब्दों में याद करते हैं,

''पिछले 10 सालों से मैं संसद का सदस्य हूं। मुझे संसद में बाबू जगजीवन राम के प्रदर्शन को नजदीक से देखने का अवसर मिला। अपने मंत्रालय पर उनकी शानदार पकड़ थी और खासतौर में राष्ट्रीय सरोकार के मुद्दे पर उनकी समझा तथा हिन्दी और अंग्रेजी में बोलने के दौरान उनका उत्साहित करने वाला भाषण सम्मिलित रूप से उन्हें हमारे योग्यतम सांसदों में से एक के तौर पर स्थापित है।''

बाबू जगजीवन राम श्रमिकों के समर्थक थे, लेकिन इसके साथ–साथ एक शानदार और आधुनिक भारत के निर्माण में श्रम शक्ति को उनके दायित्वों की याद दिलाते रहते थे। बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के एक दीक्षांत समारोह को सम्बोधित करते हुए उन्होंने कहा–''मैं श्रमिकों की नई राजनीतिक भूमिका के महत्व पर ज्यादा कुछ नहीं कहना चाहता, लेकिन यह जरूर कहूंगा कि शक्ति में वृद्धि का अर्थ जिम्मेदारी में वृद्धि है। ये दोनों साथ–साथ चलते हैं और इन्हें पृथक नहीं किया जा सकता। शक्ति के साथ अगर गैरजिम्मेदारी हो तो यह विनाश को बढ़ावा देगा। इससे स्वतंत्रता भी खतरे में पड़ सकती है और यह किसी राज्य की अवनति का कारण भी बन सकता है।''

उनक सोच पर एक विस्तृत वर्णन किए जाने के बाद भारतीय समाज में जातिगत व्यवस्था को लेकर उनके विचार कांग्रेस के मुम्बई अधिवेशन में दिए गए उनके भाषण के जरिए समझा जा सकता है–''मैंने इस बात को हमेशा माना है कि अनुसूचित जातियों और आदिवासियों की समस्याओं को सामाजिक–आर्थिक क्रम में एक सुधारवादी ढांचे के निर्माण के बिना पूरी तरह से नहीं समझाया जा सकता। इसमें लम्बा समय लगेगा, लेकिन इस तबके के कल्याण की परियोजनाओं और जिस तरह से उन्हें लागू किया जाता है उससे बहुत कुछ करना बाकी रह जाता है। यह उम्मीद की जाती थी कि इन समुदायों के जीवन स्तर में बदलाव होगा तो वे भद्र मानव के तरह जीने को प्रेरित होंगे। यह अनुमान भी लगाया जा रहा था कि चेतना बढ़ने और खुद के अधिकारों को समझने के बाद वे पहले की तरह अपने साथ किए जाने वाले व्यवहार को अस्वीकार कर देंगे। लेकिन जहां कहीं भी इस परिपाटी को अभिव्यक्ति मिली, खासतौर से ग्रामीण क्षेत्रों में, वहां दमन और उत्पीड़न फिर से बढ़ गया है। यह इस तथ्य का सूचक है कि ऊंची जातियों की सोच में वास्तविक बदलाव नहीं आया है, और वहां सिर्फ एक अनिच्छा वाला सामंजस्य ही बना पाया है। यहां तक कि तथाकथित उदारवादी भी यही व्यवहार करते हैं, सिर्फ इनकी अभिव्यक्ति का स्वरूप बदल गया है। कोई व्यक्ति दयालुता तथा शोषित और वंचित समुदायों का भला करने वाले बेहद प्रचारित इच्छाओं को कैसे लागू करेगा?'' •

तैयार करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। सार्वजनिक जीवन को समर्पित एक उत्साहित नेता के तौर पर उन्हें समाज के हर तबके में अत्यधिक सम्मान प्राप्त था। नेतृत्व के अपने गुणों और सांगठनिक क्षमताओं की वजह से उन्हें भारतीय राजनीति की एक महत्वपूर्ण शक्ति के तौर पर याद किया जाता है।

बाबू जगजीवन राम ने अपने जीवन के शुरुआती दौर से ही पिछड़े वर्गों के साथ अपना गंभीर सरोकार दिखाया। वे समाज के पिछड़े और वंचित तबकों के हालात में सुधार के घनघोर समर्थक थे। बाबू जगजीवन राम के राजनीतिक जीवन की सबसे महत्वपूर्ण उपलब्धि यह है कि उन्हें देश भर में एक सर्वप्रमुख नेता के तौर पर पहचान मिली। वे जातिवाद के अनिष्ट से देश को मुक्ति दिलाना चाहते थे, जिसने भारतीय समाज में युगों से अपनी जड़ जमा रखी थीं। जातिवाद की वजह से भारत में बड़ी संख्या में लोगों को सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक क्षेत्रों में बराबरी का अवसर नहीं दिया जाता था जो मानवता की बुनियादी अवधारणा और एक आधुनिक समाज के अनुकूल नहीं था। बाबू जगजीवन राम ने छुआछूत और मुख्यधारा से दूर रखे जाने के दुष्परिणामों को झेला था और उनका यह विचार था कि यह मानव क्षमता के पूर्ण विकास के क्षेत्र में सबसे बड़ी बाधा है। देश की तत्कालीन व्यवस्था से बुरी तरह से आहत और खासकर जाति आधारित होते थे। उनकी निष्ठा, समर्पण और उनकी राजनीतिक छवि ने पिछड़े वर्ग के लोगों में आत्मविश्वास और साहस भी दिया। उनकी उपलब्धियों को पिछड़े समुदाय के लोगों के लिए एक महत्वपूर्ण उपलब्धियों के तौर पर देखा जाता है।

वे संसद की गरिमा को सम्मान देने वाले और संसद के हर तबके की सलाह को सम्मान देने वाले तथा संसद के पटल पर संस्कार के एक प्रभावशाली प्रवक्ता के तौर पर जाने जाते थे। लोक सभा के पूर्व अध्यक्ष सरदार हुकुम सिंह ने बाबू जगजीवन राम से जुड़े अपने संस्मरणों को याद करते हुए कहा था, ''वे शूद्रों से जुड़े हुए मामलों पर उचित जवाब देते थे, अपनी आलोचना शांतिपूर्वक सुनते थे और किसी व्यक्ति की गरिमा पर हमला किए बिना इसका जवाब दोगुनी ताकत के साथ देता थे। वे नीरस व्यक्ति नहीं थे। वे दूसरी तरफ बुद्धिमता का प्रयोग बेहद आसानी के साथ करते थे और जरूरत पड़ने पर अवसर के अनुकूल हास्य का प्रयोग भी करते थे।'' बेहद विपरीत परिस्थितियों में भी बाबू जगजीवन राम अपने शांत स्वभाव के लिए जाने जाते थे। वे संसद में बैठकर अपनी भावनाओं पर पूर्वतः काबू रखते थे और बहुत ही ध्यान के साथ संसद में हो रही बहस को सुनते थे।

संसद के सबसे अधिक प्रभावशाली सदस्यों में से एक के तौर पर बाबू जगजीवन राम ने हमारे देश की संसदीय संस्थाओं को मजबूत बनाने

सपने अधूरे, हुए नहीं पूरे...

• तवलीन सिंह

भारतीय पत्रकारिता के कुछ उसूल हैं, जिन्हें जो तोड़ने की हिम्मत दिखाता है उसे उसका खमियाजा भुगतने के लिए तैयार रहना चाहिए। बुनियादी उसूल यह है कि नए सिरे से राजनीति और राजनीति सोच को देखने की कोशिश जो करते हैं वे गलत हैं। मिसाल के तौर पर सत्तर की दशक में जो राजनीतिक पंडित सोवियत संघ के खिलाफ बोलने की हिम्मत दिखाता था या इंदिरा गांधी की समाजवादी आर्थिक नीतियों के खिलाफ, उस पर फौरन चिपक जाता था सीआइए का दलाल होने का बिल्ला। आज के दौर में जिन मुट्ठी भर पत्रकारों ने (जिनमें मैं भी हूं) नरेंद्र मोदी के पक्ष में बोलने की कोशिश की है, उन पर 'भक्त' होने का आरोप लग जाता है। मेरे कई बंधु हैं पत्रकारिता की दुनिया में, जो खुल कर समर्थन करते हैं नेहरू या मार्क्स का, लेकिन उन पर भक्ति का आरोप नहीं लगता है।

अब जब ऐसा लगने लगा है कि मोदी के अच्छे दिन समाप्त होने जा रहे हैं, मुझे हर मोड़ पर मिलते हैं ऐसे लोग, जो मेरे ऊपर ताने कसते हुए पूछते हैं कि क्या अब भी मैं मोदी की भक्त हूं या नहीं। सो, मैंने मुनासिब समझा है इस सप्ताह के लेख में यद दिलाना कि भारतवासियों ने 2014 में मोदी को पूर्ण बहुत दिया था और मैंने क्यों उनका समर्थन किया था। मोदी ने हिंदुत्व के नाम पर। मेरा मानना है कि मोदी के दो शब्द जनता के दिल को छू गए थे और वे हैं परिवर्तन और विकास। याद है मुझे कि छोटे–छोटे गांवों में मुझे लोग मिलते थे चुनाव अभियान शुरु होने से पहले और उसे दौरान भी, जो कहा करते थे कि इन दो शब्दों में बयान थी उनकी सारी उम्मीदें।

निजी तौर पर मैंने मोदी का समर्थन इसलिए किया, क्योंकि परिवर्तन की उम्मीद मुझे भी थी। सारी उम्र दिल्ली में गुजारने की वजह से मैंने बहुत करीब से देखा था कि ब्रिटिश राज के समाप्त होने के बाद भी भारत को ऐसे शासक मिले थे, जो राज करना जानते थे, शासन नहीं। इनमें ज्यादातर ऐसे लोग थे, जिनकी मातृभाषा अंग्रेजी थी और जो सवर्ण जातियों के थे। कहने को तो ये लोग अपने आप की समाजवादी सोच से जोड़ा करते थे, लेकिन इसके बावजूद इन्होंने जनता के लिए ऐसी टूटी–फूटी आम सेवाएं तैयार कीं, जिन पर सिर्फ उनके नौकर निर्भर थे। उनके अपने बच्चे पढ़ते थे अच्छे प्राईवेट अस्पतालों में और आम यातायात तभी इस्तेमाल करने को मजबूर थे, जब उनकी अपनी गाड़ी खराब होती थी। ऐसा अब भी है, लेकिन मुझे उम्मीद थी कि मोदी के आने से नए किस्म के शासक भी आएंगे और शासन के नए तरीके भी।

अफसोस कि इन चीजों में मोदी अभी तक परिवर्तन नहीं ला पाए हैं। परिवर्तन सिर्फ इतना हुआ है कि लुटयंस दिल्ली की आलीशान कोठियों में अब रहने लगे हैं शान से मोदी सरकार के मंत्री उसी तामझाम से, जैसे हमारे 'समाजवादी, सेक्यूलर' राजनेता रहा करते थे। फर्क सिर्फ इतना है कि इन राजनीतिक महाराजाओं के चेहरे बदल गए हैं। परिवर्तन अब तक देश की राजनीतिक संस्कृति में नहीं आएगा, तब तक ऐसे लोग ही ऊंचे ओहदों पर बैठेंगे, जिनको कोई समझ नहीं है इस देश के आम आदमी की समस्याओं की।

निजी तौर पर मुझे उम्मीद यह भी थी कि देश की आर्थिक दिशा बदल कर दिखाएंगे। प्रधानमंत्री बनने से पहले बहुत बार कहा करते थे मोदी कि उनकी नजरों में भारत को गरीब देशों की श्रेणी में होने का कोई कारण नहीं दिखता है। मेरी अपनी राय भी यही है। भारत को समाजवादी आर्थिक नीतियों ने गरीब रखा है, क्योंकि किसी भी देश में जब अर्थव्यवस्था के तमाम अहम फैसले करने का अधिकार सिर्फ सरकारी अफसरों को दिया गया है, वहां गरीबी कभी दूर नहीं हो पाई है। ये लोग अक्सर सिर्फ अपनी गरीबी दूर कर पाए है। सो, बहुत अफसोस होता है इस बात को कहने में कि मोदी जबसे प्रधानमंत्री बने हैं, उन्होंने पुरानी आर्थिक दिशा पर ही कदम रखे हैं। यहां तक कि मनरेगा जैसी खैरात बांटने वाली योजनाओं को भी नकारने के बाद अपना समर्थन दिया है। सो, न आर्थिक दिशा बदली है और न भारत की राजनीतिक सभ्यता। न ही उन आम सेवाओं में भारतीय जनता पार्टी शासित राज्यों में वह परिवर्तन दिखने लगा है, जिसकी उम्मीद थी।

नतीजा यह है कि अब जिन लोगों की जगह मोदी ने पिछले चार सालो से ले रखी है, उनको लगने लगा है कि अगले आम चुनाव के बाद उनके अच्छे दिन लौट कर आने वाले हं। ऊपर से खूब बातें करते हैं देश के भले की, लेकिन अंदर से खुश हैं मोदी की नाकामियों पर। •

पृष्ठ 1 का शेष....'आरक्षण' ही देश के लिए लाभकारी

युवकों के नाम दर्ज हैं जिनके पास बी.ए., एम.ए. एवं मैनजमेंट की डिग्री है। हाई स्कूल, इंटर उत्तीर्ण युवकों के नाम जोड़े जायें तो यह संख्या दुगुनी से अधिक हो जायेगी।

आर्थिक उदारीकरण के कारण बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के आगमन से 40 हजार लघु उद्योग बन्द हो गये और तीन हजार उद्योग या तो बीमार हैं या बन्द कर दिये हैं। जिस कारण लाखों श्रमिकों के सम्मुख रोजी–रोटी की समस्या खड़ी हो गई है। ऐसे हालत में गैर आरक्षित वर्ग को ऐसे सिखाया जाता है कि 'आरक्षण' की वजह से आपको नौकरी नहीं मिलती और ये लोग हंगामा खड़ा कर देते हैं तथा समाज के विद्वान जन अपने लेखों द्वारा आग में घी का काम करते हैं। 2000 आदमी पूरे देश में आग लगाने की ताकत रखते हैं। आरक्षित वर्गों का आदमी सबसे शान्त आदमी है, लेकिन वह अपना शान्त रूप प्रदर्शित नहीं कर पाता। वह अपने इतिहास को जानना व समझना नहीं चाहता। अपने पुरखों की पहचान महात्मा फुले, डॉ. अम्बेडकर, कबीर, रविदास, गुरु नानक, चार्वाक, छत्रपति साहू जी महाराज, छत्रपति शिवाजी आदि के विचारों को अच्छी तरह ग्रहण नहीं कर पाता। देशवासी लोकतंत्र की मिले। 'आरक्षण' को गैर लोकतांत्रिक ढंग से दबाने का प्रयास होता रहता है, जो देश हित में नहीं है। यह मात्र मछली की छपपटाहट जो बिन पानी के है। स्वतंत्रता के बाद तत्कालीन परिस्थितियों का जो आज भी विद्यमान हैं, गहन अध्ययन करके महान नेताओं की आम सहमति से 'आरक्षण' की व्यवस्था की गई। इतिहास में विस्तार से इन तथ्यों का उल्लेख है। देश की 85 प्रतिशत जनता शोषित, दलित, पिछड़े और सर्वहारा वर्ग की सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक एवं राजनैतिक दशा जो हजारों वर्षों से दबाई गई थी, को ऊंचा उठाकर देश की मुख्यधारा में जोड़कर विकास में योगदान लाना ही 'आरक्षण' है। आज विडम्बना है कि अपने आप को योग्य एवं प्रतिभावान कहलाने वाले वर्ग आरक्षण के मुख्य उद्देश्य से आंखें फेर रहा है। यह भी सच है कि अवसर मिलने पर दबी प्रतिभाएं अपने को योग्य साबित करने में पीछे नहीं रहेगी। सन् 2011 की सिविल परीक्षा का उदाहरण है। सच्चाई यह भी है कि उच्च संस्थानों में बैठे लोगों को अपनी योग्यता पर अब भरोसा नहीं रहा। वे नहीं चाहते कि आरक्षित आदमी योग्यता में उनके बराबर बैठे। दुःस्साहस कर रहे हैं। गैर आरक्षित लोग अच्छी तरह जानते हैं कि आरक्षित वर्ग के लोगों में प्रतिभाएं हैं जो अवसर मिलते ही योग्यता हासिल कर उन्हें पछाड़ सकते हैं। यही डर है कि वे लोग 'आरक्षण' का विरोध करते हैं। आरक्षित वर्ग के लोग अपने अधिकारों से वंचित रहकर भी देश हित में लगे रहते हैं जिससे देश के विकास और समाज की उन्नति में उनकी अहम् भूमिका है।

दूसरी तरफ हम देखें तो स्पष्ट होगा कि हमारे देश में पाठशालाओं से अधिक मंदिर या देवालय है जहां हजारों सालों से एक जाति विशेष का आरक्षण है जो मंदिरों की सेवा पूजा कर सकते हैं बाकी के लोग नहीं। यहां इन मंदिरों में अकूत धन राशि, सोना, चांदी, हीरे, जवाहरात गर्भ गृह में बेशुमार दौलत है। धर्म गृह में अरबों रुपयों की सोने की मूर्तियां हैं, करोड़ों रुपयों के फिक्स डिपोजिट हैं। अरबों रुपयों की वार्षिक आय है जिन पर एकमात्र जाति विशेष के लोग कब्जा जमाए बैठे हैं। देश के बड़े उद्योग धन्धों और हर शहर के बाजारों में एक जाति विशेष का आरक्षण है। मेरा अनुराध है ऐसे महान् लेखक से मुक्त होने से पूर्व 'पूना पेक्ट' के तहत देश में इन वर्गों के लोगों को आरक्षण दिया गया। लेकिन आजादी के 70 वर्ष बाद भी ये लोग भुख से मर रहे हैं। मंहगाई, भुखमरी, अन्याय, शोषण, दमन, अपमान का शिकार सबसे ज्यादा आरक्षित वर्ग के लोग बनते हैं 15 प्रतिशत लोग 'इन्कम टैक्स' देकर देश नहीं चला सकते, बल्कि 85 प्रतिशत आबादी वाले दलित, शोषित, पिछड़े लोग जीवन–यापन की सभी चीजों को खरीदते हुए टैक्स अदा करते हैं। 'इन्कम टैक्स' देने वाले तो अधिकतर टैक्स की चोरी करके सरकार और देश को चूना लगा रहे हैं। आरक्षित वर्ग के लोग देश से प्यार करते हैं। अरबपति–खरबपति अपनी धन सम्पदा से प्यार करते हैं। वे परेशान होने पर रातोंरात किसी भी विदेशी धरती पर अपनी धन सम्पदा लेकर बस जायेंगे। गैर आरक्षित लोग आरक्षित वर्ग के पदों पर फर्जी सर्टिफिकेट लेकर नौकरी हड़प रहे हैं। वे बिल्कुल नहीं डरते। आरक्षित वर्ग की मां, बहू, बेटियों के साथ बलात्कार करने से नहीं हिचकिचकाते क्योंकि भ्रष्ट नेताओं, पुलिस, बेईमान अफसरों का संरक्षण माना जाता। दलित जब दलित ही रहता है, तो आरक्षण आर्थिक आधार पर क्यों? संविधान में सामाजिक और शैक्षणिक तौर पर आरक्षण की बात की गई है। आर्थिक आधार का कहीं भी जिक्र नहीं किया गया। आर्थिक आधार के बहाने आरक्षित वर्ग के अधिकारी, राज व सामाजिक नेताओं को इस वर्ग से अलग करने की सामान्य वर्ग के लोगों की चालाकी साफ झलकती है। सामान्य वर्ग के लिए 50 प्रतिशत आरक्षण किया जाना आरक्षण की परिभाषा में नहीं आता। उसे समाप्त करने की आवाज क्यों नहीं उठती इसमें क्रीमीलेयर या तीन पीढ़ी बाद अधिकारी नहीं बनने की बात उठती।

इसलिये समाज के संतुलित और समग्र विकास के लिये तथा सम्पन्नता और समता की दिशा में 'आरक्षण' की तकनीक का उपयोग लाभकारी होगा। समाज में जिसकी जितनी भागीदारी उस जाति को उसी अनुपात में 'आरक्षण' दे दिया जाये तो ये आन्दोलन हंगामा थम जायेंगे। आर्थिक विषमता को दूर कर सामाजिक और आर्थिक न्याय के लिये अनुसूचित जाति/जनजाति और पिछड़े वर्ग के लोगों को नियुक्ति एवं पदोन्नति में 'आरक्षण' देना देश की एकता, अखण्डता, सम्प्रभुता तथा विकास के लिये एक कवच सिद्ध होगा। •

संकल्पना को नहीं समझे। लोकतंत्र का केवल एक हिस्सा जान पाये। राष्ट्र को सामाजिक, आर्थिक राष्ट्र में परिवर्तित करना जो लोकतंत्र की संकल्पना है, को नहीं समझे। लोकतंत्र की यह पूर्व शर्त है कि देश में कोई पीड़ित वर्ग नहीं रहना चाहिये। डॉ. अम्बेडकर, महात्मा फुले, वाल्टेयर, मार्टिन लूथर किंग के विचारों को ब्राह्मणवादी विचारों में रखेंगे तो उनके विचारों की हत्या होगी, जो अच्छी बात नहीं है।

जाति आधारित आरक्षण योग्यता में बाधक है, इसलिये जाति नहीं योग्यता को आधार मानकर नौकरी दी जाये। ऐसा ही आरक्षण विरोधी आन्दोलनकारी एवं सवर्ण लेखकगण बताते हैं। लेकिन यहां जाति और आरक्षण के बीच में योग्यता फंसी नजर आती है। यदि ऐसा है तो जाति और आरक्षण दोनों को ही समाप्त कर दिये जाये, मात्र 'योग्यता' ही रहे। योग्यता, प्रतिभा और काबलियत किसी जाति, धर्म और व्यक्ति विशेष की धरोहर नहीं होती, न ही उनकी जागीर होती है। जो सदा उन्हीं के बीच बनी रहे। बल्कि शिक्षा–ज्ञानार्जन एवं परिश्रम से कोई भी व्यक्ति योग्य प्रतिभावान हो सकता है। इसमें महत्वपूर्ण बात यह है कि उसे अवसर प्राप्त होना चाहिये। अर्थात् प्रश्न है अवसर देने का जो सामान्य रूप से खुले दिल दिमाग व माहौल में इसलिये आरक्षण के विरुद्ध प्रदर्शन करवाते हैं। जो एक सामान्य प्रक्रिया है, लेकिन सही काम के लिए सही रास्ता होना चाहिये। यह विरोध प्रदर्शन अनुचित ही नहीं, कानूनन संवैधानिक जुर्म है।

रक्षा–सुरक्षा में हुए भ्रष्टाचार, सार्वजनिक उपक्रमों में घाटा और बन्द होना इसके लिये कौन जिम्मेदार है? साफ जाहिर है कि उच्च पदों पर बैठे हुए प्रतिभाशाली सामान्य वर्ग के योग्य व्यक्ति ही इसके जिम्मेदार हैं। लेकिन आरक्षण का विरोध करने वाले आखिर आरक्षित पर जिम्मेदारी थोप देते हैं। सच्चाई से कब तक मुंह मोड़ते रहेंगे? जाति नहीं योग्यता की बात कहने वाले लोग अपनी इस विचारधारा पर टिके रहेंगे? जाति व्यवस्था के चलते प्रतिभाएं धूल में मिल रही हैं। उनका भाग्य काल कोठरी में बन्द है। भारत में जन्मी योग्य प्रतिभाएं चंद रुपयों की खातिर अपनी सुख सुविधा के लिये देश छोड़ 'एन.आर.आई.' हो रहे हैं। वहां से आरक्षण के विरोधियों का समर्थन कर रहे हैं। राष्ट्र सेवा की अनदेखी कर पलायन करने वाले नैतिक रूप से भारत का नागरिक होने का दम नहीं रखते, फिर उन्हें देश कानून और नीतियों में दखल देने का कहां हक है? लेकिन शायद कुछ विदेशी करेन्सी की पूंजी निवेश के नाम पर भारत को आंखें दिखाने का अपनी कलम इन जाति विशेष के आरक्षण के विरुद्ध चलायें जो कुछ नहीं करते हुए भी नौकरी की लालसा नहीं रखते हुए खरबों रुपयों के मालिक हैं। इन आरक्षणों के विरुद्ध धरना, प्रदर्शन, हंगामा नहीं होता।

यह कहना कि 'आरक्षण' गरीब व्यक्तियों को दिया जाये। ठीक है वास्तव में देखा जाये तो भारत में 85 प्रतिशत लोग अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति, पिछड़े वर्ग के लोग निवास करते हैं जो आर्थिक, धार्मिक, सामाजिक और राजनैतिक आधार से पिछले लगभग तीन हजार वर्षों से दबे–कुचले हैं। जिन्हें सभी अधिकारों से वंचित किया गया। वे लोग अपने पास धन संग्रह नहीं कर सकते, धार्मिक कार्यक्रमों में हिस्सा नहीं ले सकते, न ही कोई धर्म वाक्य सुन अथवा बोल सकते। वे समाज की बसावट में गांव या शहर के बाहर अपनी बस्ती बनाकर झूठन पर जिन्दा रहे, राजनीति तो उन्हें छू भी नहीं सकती। यदि शस्त्र रखना व चलाना अर्थात् राजनैतिक लड़ाई लड़ना मात्र एक जाति विशेष का अधिकार था अगर उनका यह आरक्षण नहीं होता तो देश तीन हजार साल तक गुलाम नहीं रहता। सोमनाथ के मंदिर का भ्रम नहीं टूटता। कहने का तात्पर्य है कि आज के आरक्षित वर्ग के लोगों से भी अधिक कोई गरीब है? देश अंग्रेजों धन–बल से खरीद लेते हैं।

सवर्ण विद्वान लोग अपनी लेखनी चलाते समय यह भूल जाते हैं कि 'आरक्षण' कोई भीख नहीं है, यह संवैधानिक अधिकार है। 'आरक्षण' राष्ट्रपिता महात्मा गांधी तथा हिन्दू नेताओं और डॉ. बी.आर. अम्बेडकर एवं दलितों के नेताओं के बीच 'पूना पैक्ट' पूना की यरवदा जेल में दलित शोषितों का सामाजिक, शैक्षणिक व आर्थिक स्तर जब तक समाज के अन्य सम्पन्न वर्ग के बराबर स्तर तक नहीं आ जाते तब तक इसे खत्म नहीं किया जा सकता। इन लेखकों का कहना है कि आरक्षण सामाजिक नहीं होकर आर्थिक आधार पर हो। आरक्षण प्राप्त करता बड़ा अधिकारी बनकर सामान्य उच्च वर्ग के समान हो जाता है। आरक्षण पाने वाला तीन पीढ़ी बाद स्वयं आरक्षण छोड़ दे। यह सोच सही नहीं है। आमदनी, सम्पत्ति व्यक्ति की शैक्षणिक और आर्थिक स्थिति बड़ा सकती है लेकिन उनकी सामाजिक स्थिति में कोई फर्क नहीं आता। इन वर्गों का कोई देश का उप प्रधानमंत्री, राष्ट्रपति, उच्चतम न्यायालय का मुख्य न्यायाधीश, मुख्यमंत्री, लोक सभा व विधान सभा अध्यक्ष अपनी योग्यता से बन जाये फिर भी ये लोग आरक्षित वर्ग के ही कहलायेंगे। जबकि इन पदों पर आरक्षण नहीं है। अनेक राष्ट्रीय प्रतिभाओं को राष्ट्रीय व्यक्तित्व नहीं

बाबा भीम

जहर पिया सागर, अमृत दिया अपार।
सदियों के आवरण को चिर कलम से,
न अस्त्र चला न शस्त्र चला,
यूं बदला इतिहास कलम से,
यूं मुक्त हुआ मानव
आज सदियों के क्रन्दन से,
धन्य हुई ऐसी मां
जिसकी दुनिया करे वन्दन से।
खुद तपा आग बनकर
और जला दीप बनके,
दिया मान सम्मान हमें पर
पग–पग पर जल करके,
बन्धन तोड़े सदियों के
बनके उजाले किरण से
जीवन में संघर्षों के राही बनके,
पग–पग की बाधाओं से लड़–लड़ के,
गोलमेज की भरी सभा में गरजे थे,
दलितों के अधिकारों के हित बरसे थे।
नारी का उद्धार किया,
हिन्दू कोड बिल मनवाके,
दुनिया को परिचय दिया
भारत का गौरव बढ़ा के,
दूर दृष्टि ज्ञान अपार,
संविधान लिखा विशाल।
मानव को मानव बनाने आए थे,
छुआछूत का रोग मिटाने आए थे,
मिटाने पशुता की परछांई को,
युगों–युगों की कारा को,
बदले इतिहास पुराने थे।
आंधी तूफान बनके आए थे।
बाबा भीम तुम लाजवाब थे।
बाबा भीम तुम महान् थे।

– डॉ. कान्ति लाल यादव

हिमायती
4 / नवम्बर (प्रथम), 2018 (कुल पृष्ठ 4)
पोस्टल डिस्पेच तिथि : 1-2 नवम्बर, 2018

आर. एन. आई. नं. 40611/62
रजि. G-3/DL(N)/090/2018-2020
प्रकाशन तिथि : 30 अक्तूबर, 2018

डा. बी. आर. अम्बेडकर की विरासत

• डा. रिचा राज

भारतीय संविधान के निर्माता और भारत की जातीय प्रणाली के कट्टर आलोचक भीमराव रामजी अम्बेडकर का जन्म 14 अप्रैल, 1891 को महार परिवार में हुआ था जिसे छुआछूत वाली जाति मानी जाती थी। एक प्रतिभाशाली छात्र के रूप में उन्होंने एलफिन्सटन कॉलेज, बम्बई से स्नातक की डिग्री हासिल की थी और 1913 में कोलम्बिया यूनिवर्सिटी, न्यूयार्क चले गए थे ताकि अर्थशास्त्र में मास्टर डिग्री प्राप्त कर सके। वहां से वह 1916 में इंग्लैंड चले गए ताकि लंदन स्कूल ऑफ इकनॉमिक्स में अध्ययन जारी रख सकें। वह 1917 में भारत लौट आए और बड़ौदा में बड़ौदा के महाराजा के राज्य प्रशासन के लिए काम करना शुरू किया। बड़ौदा शहर में उन्हें ठहरने की जगह पाना कठिन हो गया था। उन्हें किराए पर एक कोठरी लेने के लिए अपने को पारसी बताना पड़ा और जैसे ही उनकी जाति का पता चला उन्हें उस कोठरी से भी बाहर कर दिया गया। इस वारदात का उन पर निर्णायक प्रभाव पड़ा और वहीं से उनका राजनीतिक जीवन शुरू हुआ। वह लौटकर लंदन गए ताकि अर्थशास्त्र में एम.ए. की डिग्री हासिल कर सकें और बाद में कोलम्बिया यूनिवर्सिटी से पीएच.डी. किया और 1927 में औपचारिक रूप से पीएच.डी. की डिग्री लेने वाले वह प्रथम अछूत व्यक्ति थे। उन्होंने अक्टूबर, 1916 में ग्रेज इन में बार कोर्स के लिए नामांकन कराया तथा बम्बई उच्च न्यायालय में वकालत शुरू की जहां उनका निम्न जातीय स्तर उनकी वकालत में बाधक बना। अध्यापन कर उन्हें अपनी आमदनी की भरपाई करनी पड़ी। लेकिन उनके वकालत के पेशे और ट्रेनिंग ने उन्हें अछूत समुदाय के लिए बहस करने में मदद की।

जब साउथ बौरी कमेटी ने, जिस पर 1919 में संवैधानिक सुधार में चुनावी मताधिकार का मुद्दा शामिल करने के मुद्दे की छानबीन का काम सौंपा गया था, अम्बेडकर ने इस बात को दुहराया कि हिन्दू समाज का वास्तविक मुद्दा बाह्मण बनाम गैर ब्राह्मण नहीं, बल्कि छूत बनाम अछूत है, और इसलिए उन्होंने क्षेत्रीय चुनाव क्षेत्रों पर आधारित चुनावी बन जाएंगे और केवल व्यक्तिगत प्रतिनिधित्व ही जनप्रिय सरकार का गठन सुनिश्चित करेगा। क्यों कि यह बहुसंख्यकों एवं अल्पसंख्यकों के हित एवं मत का प्रतिनिधित्व करेगा। उनका यह मत था कि राजनीतिक एवं सामाजिक आजादी का केवल अछूतों द्वारा तभी लाभ उठाया जा सकता है जब कानूनी एवं राजनीतिक सुधारों द्वारा उनके राजनीतिक रक्षोपाय की गारंटी दी जाए।

डा. बी.बार. अम्बेडकर के लिए छुआछूत गुलामी से भी बदतर है। छुआछूत और गुलामी में अंतर है जो छुआछूत को अंकुश मुक्त सामाजिक व्यवस्था बनाती है। गुलामी कभी बाध्यकारी नहीं होती है, जबकि छुआछूत बाध्यकारी है। किसी व्यक्ति को दूसरे व्यक्ति को अपना गुलाम बनाने की इजाजत होती है। यदि वह गुलाम बनना नहीं चाहता हो तो ऐसा बनना अनिवार्य नहीं है। परन्तु किसी अछूत के लिए कोई विकल्प नहीं है। यदि एक बार उसने अछूत परिवार में जन्म ले लिया तो उसमें अछूत की सारी अयोग्यताएं दिखने लगेंगी। गुलामी का कानून छुटकारे की इजाजत देता है। एक बार जो गुलाम बन गया, वह हमेशा गुलाम बना रहेगा, ऐसा भाग्य गुलाम का नहीं होगा। अछूत की स्थिति में कोई बचाव नहीं है। एक बार अछूत हैं तो हमेशा अछूत बना रहेगा। उनकी गुलामी उन्हें अवगत कराए बिना गुलामी बनी रहेगी। यह गुलामी है, हालांकि यह अछूतापन है। यह वास्तविक है हालांकि यह अप्रत्यक्ष है। यह स्थाई है क्योंकि यह अनभिज्ञ है। दोनों व्यवस्थाओं में छुआछूत निस्संदेह सबसे बुरा है। और इसलिए उन्होंने इस बात पर जोर डाला कि अछूतों को राजनीतिक शक्ति चाहिए, उनके हाथ में राजनैतिक शक्ति के बिना उनकी समस्याओं का कभी समाधान नहीं निकलेगा। और यह अधिकार भारत के ढांचे के भीतर मिलेगा जो स्वतंत्र है।

अम्बेडकर एवं गांधी दोनों समानता एवं न्याय के पक्षधर थे, परन्तु वे उन पर अमल के तरीके से सहमत नहीं थे जिससे शोषित समुदाय को मुक्त कराया जा सके। गांधीजी ने ऐसी पद्धति सुझाई थी जिससे आत्मनिरीक्षण किया जा सके। इसलिए वास्तविक और दीर्घकालीन समाधान तभी निकाला जा सकता है जब दलितों की सामाजिक एवं आर्थिक गतिशीलता आंतरिक बदलाव के साथ आनी चाहिए। ऐसा बदलाव न केवल विशाल बहुमत वाले हिन्दू समाज में हो, बल्कि अन्य धार्मिक, समुदायों के बीच में भी होना चाहिए, जो भारत में जातिगत व्यवस्था को मानती है। इसलिए गांधी एवं अम्बेडकर के मतभेद का पता लगाने की बजाए यह बेहतर होगा कि दोनों महान् हस्तियों के बीच समझौते की गुंजाइश रखी जाए, जो भारत की आजादी के लिए संघर्ष कर रहे थे।

अम्बेडकर एक महान् संविधानविद् भी थे और उन्होंने एक ठोस एकल इकाई वाले राष्ट्र तथा वयस्क मताधिकार की वकालत की थी, जिसमें कुछ आरक्षित सीटें हों। यह उनके लिए महत्वपूर्ण था कि आर्थिक एवं सामाजिक लक्ष्यों की पूर्ति के लिए संवैधानिक व्यवस्था को अपनाया जाए। उन्होंने चेतावनी दी कि राजनीतिक जनतंत्र में सामाजिक विषमता कायम रही अथवा भारतीय संवैधानिक नैतिकता का पालन नहीं हुआ तो वह खतरे मे पड़ जाएगी। अम्बेडकर एक राजनीतिक उदारवादी थे जो आजादी, समानता एवं भाईचारे के मूल्यों में विश्वास करते थे। उन्होंने महसूस किया था कि राष्ट्र को मात्र राजनीतिक जनतंत्र से संतुष्ट नहीं होना चाहिए। राजनीतिक जनतंत्र को अवश्य

सम्पादकीय का शेष....किंग मेकर नहीं, किंग बनो

रख दिया। इसलिए बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर यहां के मूल निवासी दलित–शोषितों को बराबरी के संवैधानिक अधिकार देकर उन्हें देश की सत्ता पर काबिज करना चाहते थे। इसलिए उन्होंने निर्वाचन में 'वोट' का बराबर का अधिकार देकर और निर्वाचन, शासन, प्रशासन व शैक्षणिक संस्थाओं में आरक्षण का विशेष कोटा प्रदान कर उन्हें अन्य सवर्ण जातियां समान स्तर पर लाने का विशेष व्यवस्था की थी।

समाजवादी नेता डा. राम मनोहर लोहिया कहा करते थे कि इस देश के 100 में से 60 मूल निवासी है, और इसी अनुपात के आधार पर देश की शासन, सत्ता, धन–सम्पदा का बंटवारा होना चाहिए। वहीं मान्यवर कांशीराम 'पेन' को दिखाकर कहा करते थे कि 'पेन' का जो ऊपर का 'ढक्कन' का हिस्सा है, वह देश के 15 फीसदी सवर्णों का हिस्सा है और नीचे का पूरा 'पेन' समाज का 85 फीसदी बहुजनों का हिस्सा है। इसलिए देश की 85 फीसदी भू–सम्पदा शासन–सत्ता पर यहां के मूल निवासियों का कब्जा होना चाहिए उन 85 फीसदी मूल निवासियों का हक ये 15 फीसदी सवर्ण दबाये बैठे हैं।

देश को आजादी मिले लगभग 70 साल बीत गये। विभिन्न राजनीतिक पार्टियों की सरकारें आईं और चली गईं। मूल निवासी दलितों के उत्थान के लिए 'आरक्षण' कोटा निर्धारित किया गया, उत्पीड़न रोकने के लिए अनुसूचित जाति–अनुसूचित जनजाति उत्पीड़न निरोधक कानून (एससी/एस.टी. एट्रोसिटी एक्ट) बना, पंचवर्षीय योजनाओं में उनकी आबादी के अनुपात में राशि आबंटित करने के लिए 'कम्पोनेन्ट प्लान' प्रावधान बनाया गया। दलितोत्थान के लिए मिले इन कानूनी प्रावधानों का गहन अध्ययन किया जाए तो पता चलेगा, इन पर शोर–शराबा ज्यादा हुआ, उन पर अमल कम हुआ। आज भी दलितों के आरक्षण और एस.टी./एस.टी. एक्ट के खिलाफ सवर्ण जाति के लोग तोड़–फोड़, आगजनी और आन्दोलन करने में लगे हैं। वे इस बात को मानने के लिए तैयार नहीं है कि दलित इस देश के मूल निवासी हैं जिनकी धन–धरती, शासन सत्ता पर वे अल्पसंख्यक होकर भी सदियों से उपभोग कर रहे हैं और वे देश के असली मालिक होते हुए भी अभावों का नरकीय जीवन जीने पर मजबूर हैं।

देश की विभिन्न राजनीतिक पार्टियों में दलितों के कदावर नेता हैं, उनमें से कुछ मंत्री हैं। लोकसभा की 545 सीटों में से 130 सीटों पर दलितों के नेता 'एम.पी.' हैं, पर वे विभिन्न पार्टियों में बंटे होने कारण एकजुट होकर दलितों के अधिकारों के लिए लड़ने के लिए तैयार नहीं हैं जबकि वे सब मानते हैं कि दलितों को उनके अधिकार नहीं मिल पा रहे, बल्कि अधिकार के नाम पर उन पर प्रहार हो रहा है।

आज शिक्षा मंहगी हो गई है। दलित युवाओं का स्कूल–कॉलेजों में प्रवेश लेकर पढ़ाई करना आसान नहीं रहा है। सरकारी नौकरियां रही नहीं, ऐसी स्थिति में आरक्षित आरक्षण कोटा बेमायने हो गया है। पढ़–लिखकर दलित युवाओं को नौकरी के लिए ठोकरें खाने के लिए मजबूर होना पड़ रहा है। अस्पताल में इलाज कराना भी आसान नहीं रह गया। ऐसे में दलित आर्थिक स्थिति ठीक न होने पर बेमौत मरने के लिए विवश है। महंगाई की मार ने दलितों को बेबस कर दिया है। उसे नियमित रोजगार नहीं मिलने के कारण घर चलाना मुश्किल हो रहा है। ऐसी स्थिति में बच्चों का भरण–पोषण भी दूभर हो गया है। हमारे दलित नेताओं का इस ओर ध्यान ही नहीं है क्योंकि उन्हें तो सभी सुख–सुविधायें बिना किसी मेहनत या कष्ट के आराम से मिल जाती हैं। इसलिए वे अपने समाज के इन लोगों की लड़ाई लड़ने की अपेक्षा मुंह सीलकर बैठना ज्यादा अच्छा समझते हैं। उन्हें डर है कि अगर उन्होंने अपने दलित समाज के लोगों के लिए आवाज उठाई तो उन्हें आगामी चुनावों में पार्टी का टिकट नहीं मिलेगा, फिर उन्हें अब मिल रही सुख–सुविधा कहां मिल पायेंगी?

अब अगले साल 2019 में लोकसभा के चुनाव होने हैं। पांच राज्यों में अगले महीने चुनाव होने जा रहे हैं। यही अवसर है जब हम अपनी 'दलित–शक्ति' का अहसास और आभास करा सकते हैं। इसके लिए अभी से अपना 'चुनावी प्लान' बनाइये। अब तक आप 'किंग मेकर' के रूप में लोगों को 'किंग' बनाते आये हैं, पर अब किंगमेकर की भूमिका को छोड़कर 'स्वयं किंग' बनने के लिए तैयारी कीजिये। जयभीम।

– डा. सुमनाक्षर

सामाजिक जनतंत्र में तब्दील होना चाहिए। राजनीतिक जनतंत्र तब तक कायम नहीं रहेगा जब तक कि उसका आधार सामाजिक जनतंत्र न हो जिसका अर्थ वह जीवन का पथ हो जो आजादी, समानता एवं भाईचारे को जीवन के सिद्धांत के रूप में मान्यता दे।

अम्बेडकर ने 1954 में दावा किया था कि उनके दर्शन की जड़ धर्म में सन्निहित है न कि राजनीतिक विज्ञान में। उन्होंने उन गुणों को भगवान बुद्ध के उपदेश से ग्रहण किया था। उनके दर्शन में आजादी एवं समानता का स्थान था। परन्तु उन्होंने आगे कहा था कि असीमित आजादी समानता को नष्ट कर देती है और निर्बाध समानता में आजादी के लिए कोई स्थान नहीं है।

उनके दर्शन में केवल कानून का स्थान है जो आजादी अथवा समानता के उल्लंघन का रक्षोपाय है। परन्तु उन्हें यह विश्वास नहीं था कि कानून आजादी अथवा समानता के उल्लंघन के लिए एक गारंटी है। उन्होंने भ्रातृत्व को सर्वोच्च स्थान दिया था जो आजादी अथवा समानता के इन्कार के खिलाफ एकमात्र वास्तविक रक्षोपाय है। भ्रातृत्व भाईचारे अथवा मानवता का दूसरा नाम है। यह पुनः धर्म का दूसरा नाम है। •

स्वामी, सम्पादक/ प्रकाशक एवं मुद्रक डॉ. सोहनपाल सुमनाक्षर द्वारा वन्दना आफसेट प्रिन्टर्स, A-9 सराय पीपलथला एक्सटेंशन, दिल्ली-33 में मुद्रित तथा रजि. कार्यालय : 233 टैगोर पार्क, माडल टाउन, दिल्ली-9 से प्रकाशित। ❑ सह सम्पादक - श्रीमती त्रिलोचन सुमनाक्षर ❑ व्यवस्थापक : जय सुमनाक्षर, फोन : 27421449, मो. 9810278936 **Email-sumanakshar@ymail.com**

नोट : हिमायती में प्रकाशित रचनाओं के लिए सम्पादक की सहमति जरूरी नहीं। हिमायती से सम्बन्धित किसी भी कानूनी कार्रवाई का क्षेत्र दिल्ली न्यायालय तक ही सीमित है।

सम्पादकीय कार्यालय : बी 3/9, दूसरी मंजिल, माडल टाउन-1, दिल्ली-110009